प्रवचन : 2

संसार को नापसन्द करने में आप स्वाधीन हैं कि पराधीन?

श्रोता-स्वाधीन।

ऐसे ही आप परमात्मा को पसन्द करने में भी स्वाधीन हैं। जो साधक संसार को नापसन्द करने में स्वाधीन है, वही साधक परमात्मा को पसन्द करने में स्वाधीन है। अब कठिनाई क्या होती है कि संसार को तो हम पसन्द करते रहते हैं और परमात्मा से मिलना चाहते हैं। यह कभी सम्भव नहीं होगा। संसार को पसन्द करते हुए परमात्मा से मिलना सम्भव नहीं। हाँ, एक बात है कि संसार के द्वारा हमें जो वस्तु प्राप्त है, उसे संसार की सेवा में लगा दें। जो सामर्थ्य प्राप्त है उसे भी सेवा में लगा दें। योग्यता प्राप्त है वह भी सेवा में लगा दें। हमसे गलती यह होती है कि सेवा तो हम करते नहीं, न वस्तु के द्वारा, न योग्यता के द्वारा, न सामर्थ्य के द्वारा, न सद्भाव के द्वारा। सेवा करते नहीं और चाहते हैं कि संसार हमको नापसन्द हो जाए। सो कैसे होगा भाई? सेवा नहीं करोगे तो सेवा का उल्टा मालूम है क्या होता है?-भोग। तो भोग करोगे। अगर सेवा नहीं करोगे तो भोग करोगे। अगर मिली हुई वस्तु-योग्यता-सामर्थ्य को सेवा-सामग्री नहीं बनाते हो तो वह भोग-सामग्री बन जाएगी। और भोग करोगे तो मोह और आसक्ति में आबद्ध हो जाओगे।

क्या कारण है कि हमारे जीवन का मोह नाश नहीं होता, आसक्ति नाश नहीं होती? इसलिए, कि हम सेवा नहीं करते हैं, भोग करते हैं। भोग होता है ममता से, कामना से, तादात्म्य से। इनके बिना भोग की सिद्धि नहीं होती। यदि हम सेवा करना पसन्द करें, तो सेवा होगी प्राप्त वस्तु से, अप्राप्त से नहीं, प्राप्त से, प्राप्त सामर्थ्य से, प्राप्त योग्यता से प्राप्त से प्राप्त की ही सेवा होती है। क्या राय है? अप्राप्त की सेवा होती है क्या? और प्राप्त के द्वारा ही होती है। तो जो-जो वस्तु प्राप्त हैं, जो-जो व्यक्ति प्राप्त हैं, जो-जो योग्यता, सामर्थ्य प्राप्त हैं-उनके द्वारा प्राप्त व्यक्तियों की सेवा कीजिये अथवा प्राप्त परमात्मा को पसन्द कीजिये। प्राप्त की सेवा कीजिये; और प्राप्त ही परमात्मा को पसन्द कीजिये। तो जो संसार तुम्हें प्राप्त मालूम होता है तो वह तो आपका सेव्य हो गया और परमात्मा जो दिखाई नहीं देता वह आपका प्रिय हो गया। परमात्मा हमारा प्रेम-पात्र है, संसार हमारी सेवा का सेव्य है। तो संसार की सेवा और परमात्मा का प्रेम, अगर आपको पसन्द आ जाए तो अभाव का अभाव हो सकता है। परमात्मा का प्रेम और संसार की सेवा आपको पसन्द आ जाए-यही सार निकला न! समझ में आया कि नहीं?

अब लोग गलती क्या करते हैं? देखिये, हमसे गलती क्या होती है? बड़े-बड़े लोगों से होती है। क्या करते हैं कि संसार की सेवा पसन्द नहीं करते, संसार की सहायता से शरीर को सुख-पूर्वक रखना पसन्द करते हैं। जरा गम्भीरता से सोचिये तो! संसार की सहायता से, हमारे शरीर को भूख लगे तो भोजन मिल जाए, प्यास लगे तो पानी मिल जाय, नींद लगे तो बिस्तर मिल जाय, यानी जो-जो शरीर की जरूरतें पैदा हों वे सब-की-सब पूरी होती जायें, इसको हम पसन्द करते हैं। नतीजा यह होता है कि शरीर की सारी जरूरत कभी पूरी नहीं होती। यह कभी नहीं होगा कि आपको हमेशा भूख लगती रहे और हमेशा ही भोजन मिलता रहे। हमेशा प्यास लगती रहे और हमेशा ही पानी मिलता रहे। हमेशा ही कामना उत्पन्न होती रहे और पूरी भी होती रहे। यही कारण है कि आज का साधक भटक रहा है, बड़ी बुरी तरह से भटक रहा है। किस बात के लिए?-कि साहब किसी तरह से हमारे शरीर की आवश्यकता पूरी हो जाए। मान के रूप में, भोग के रूप में, जरूरत के रूप में। इसलिए भटक रहा है। तो जीवन का जो सत्य है वह हमें प्रेरणा देता है कि शरीर की आवश्यकता को समाज की मर्जी पर छोड़ दो और शरीर के द्वारा यथासम्भव समाज की सेवा करो। शरीर के द्वारा यथा-शक्ति सेवा करते रहो, शरीर की आवश्यकता को समाज की मर्जी पर छोड़ दो। अगर समाज शरीर की आवश्यकता को पूरी न करे, तो तुम्हें कोई घाटा नहीं पड़ेगा। क्यों? क्योंकि, शरीर सदैव तुम्हारे साथ रहेगा ही नहीं। तो तुम्हारा क्या घाटा पड़ेगा? किसी सेवा-परायण शरीर की समाज अगर परवाह नहीं करता, तो समाज की क्षति होती है कि सेवक की क्षति होती है? क्या राय है?

एक साधक-सेवा करने में बड़े झंझट आते हैं।

स्वामी जी-भले आदमी! मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि सेवा करने में झंझट आते हैं तो कौन-सी प्रवृत्ति ऐसी है जिसमें झंझट नहीं हैं। सेवा माने प्रवृत्ति, प्रवृत्ति है दूसरे के हित के लिए। तुम अपने सुख के लिए प्रवृत्ति करते हो, दूसरे के हित के लिए नहीं करते। इसलिए झंझट मालूम होते हैं। मैं आपसे बड़ी नम्रता के साथ यह बात निवेदन करना चाहता हूँ, इस पर लोगों को गम्भीरता से विचार करना चाहिए कि जो लोग यह सोचते हैं कि शरीर हमारी रुचि-पूर्ति का साधन है, वे कभी भी शान्ति नहीं पाते। उनको कहीं भी, कभी भी शान्ति नहीं मिलती। शरीर है सेवा-सामग्री। इसके द्वारा दूसरों की उस रुचि को पूरा करो जो तुम्हारे ज्ञान और सामर्थ्य के अनुरूप है। सेवा का मतलब है कि जो बात तुम्हारी सामर्थ्य के अनुरूप है उसे पूरी करना है। जो कार्य तुम्हारे ज्ञान के अनुसार है उसे करना है। तो मैं आपसे पूछता हूँ कि ज्ञान और सामर्थ्य के अनुसार कार्य करने में भी कोई कठिनाई है? कोई ईमानदार

आदमी नहीं कह सकता है। तुमको सिर्फ उतना ही करना है जो तुम्हारे ज्ञान के अनुसार हो। या वही करना है जो तुम्हारी सामर्थ्य के अनुसार है।

मैं तो आपसे यह नम्र निवेदन करना चाहता हूँ कि मेरे भाई! गम्भीरता से इस बात पर सोचो कि अगर हम सामर्थ्य-विरोधी काम करने से इन्कार नहीं करते हैं, ज्ञान के अनुरूप जो कार्य है उसके करने से इन्कार नहीं करते हैं तो कोई नाराज नहीं होता। नाराज कब होता है? सामर्थ्य है और इन्कार कर दें; ज्ञान के अनुसार है और इन्कार कर दें। सोने के लिए तो तुमको कमरा चाहिए, लेकिन आश्रम नहीं चाहिए! फिर! यहाँ से निकलोगे तब, तो किसी और के बनाये हुए घर में घुसेंगे। तो शरीर की आवश्यकता के लिए तो आपको संसार चाहिए, पर संसार के काम आने के लिए तुम्हारी छाती फटती है। सारी जवानी चल-चलकर बर्बाद करोगे, टुकड़े माँग-माँगकर बर्बाद करोगे, पर काम नहीं करोगे, सेवा नहीं करोगे। तो यह जीवन का सत्य नहीं है। जीवन का सत्य यह है-काम करो कुछ चाहो मत। तब क्या होता है, तब तुम्हारी शारीरिक आवश्यकता सम्मान-पूर्वक पूरी होती है। आज हमको अगर कहीं जाने की जरूरत पड़ जाए तो मोटर माँगनी पड़ती है। श्री.....जी महाराज ने चातुर्मास यहाँ किया, तो सेठ ने पूरे तीन महीने के लिए मोटर दे दी। नया बना हुआ बंगला भी दे दिया रहने के लिए। मोटर भी दे दी और साधुओं की भिक्षा का इन्तजाम भी कर दिया सेठों ने। क्यों कर दिया? इसलिए कि वे सेठों की जरूरत से यहाँ आये, केवल अपनी जरूरत को लेकर नहीं आये। और तुम अपनी जरूरत को लेकर यहाँ आये, आश्रम की जरूरत को लेकर नहीं आये। इसलिए तुम्हें आदर नहीं मिला, प्यार नहीं मिला, सम्मान नहीं मिला। रोटी तो मिली-आठ बरस तक खाई तुमने रोटी।

तो मैं आपसे यह नम्र निवेदन कर रहा हूँ कि यह भ्रम निकाल दो कि तुम रुचि-पूर्ति करते रहो और तुमको शान्ति मिल जाए। यह किसी काल में नहीं मिलेगी और आज तक किसी को नहीं मिली। शान्ति उसी को मिली है जो दूसरों के काम आया है अथवा जो अचाह हो गया, अथवा शरणागत हो गया है। चाहे तो प्रभु के शरणागत होकर प्रभु के नाते सेवा करो। चाहे अचाह होकर आत्मा के नाते सेवा करो। चाहे उदार होकर जगत के नाते सेवा करो। सेवा करने से जान बचेगी नहीं! कितना ही भटक लो। अनुभव कर लो, भटक लो, देख लो। जान नहीं बचेगी। हाँ सुख की दासता, दुःख के भय में बँधे रहोगे, सेवा नहीं करोगे तो। अगर सेवा करोगे तो सुख की दासता भी नाश हो जाएगी, दुःख का भय भी नाश हो जाएगा। परमात्मा भी मिल जाएगा, शान्ति भी मिल जायेगी, मुक्ति भी मिल जायेगी, भक्ति भी मिल जाएगी। यह जीवन का सत्य है।